सुविचार

जीवन का दर्शन समझना इतना आसान नहीं। कुछ नोबेल पुरस्कार और इसके समकक्ष कोई दूसरा सम्मान पाने वालों से ऐसे लोग अपनी जिन्दगी अधिक आनंद से बिताते हैं जिन्हें नोबेल या इसके समकक्ष पुरस्कारों के बारे में कुछ भी पता नहीं होता।

सुभाष चंद्र लखेड़ा, सान होजे, कैलिफोर्निया

संपादकीय

भूख और बर्बादी के बीच का भारत : थाली में सिमटा हमारा नैतिक पतन

(प्रथम पृष्ठ से जारी)

भोजन की बर्बादी केवल थाली तक सीमित नहीं, इसका सबसे गहरा प्रहार पर्यावरण और अर्थव्यवस्था पर होता है। अनुपयोगी भोजन कचरा भराव स्थलों में सड़कर मीथेन गैस छोड़ता है, जो भूमंडलीय तापवृद्धि की प्रमुख वजह है। वैश्विक स्तर पर खाद्य अपव्यय कुल हरितगृह गैस उत्सर्जन का 8 से 10 प्रतिशत हिस्सा है, जो विमानन उद्योग से भी अधिक है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में यह केवल अन्न नहीं, बल्कि पानी, बिजली, डीजल, उर्वरक, परिवहन, भंडारण और किसानों के श्रम का भी अपव्यय है। अनुमान है कि इससे भारत को हर वर्ष डेढ़ लाख करोड़ रुपये से अधिक का आर्थिक नुकसान होता है। इतनी राशि से हजारों विद्यालय, अस्पताल, सिंचाई और पोषण योजनाएं साकार हो सकती हैं। सच यह है कि हम भोजन नहीं, अपने भविष्य की संभावनाएं कूड़ेदान में फेंक रहे हैं।

विडंबना यह है कि यह संकट तकनीक का नहीं, मूल्यों के क्षरण का परिणाम है। जिस समाज ने अन्नपूर्णा को देवी माना, वहीं अन्न का अपमान सामान्य होता जा रहा है। एक ओर करोड़ों लोग दो वक्त की रोटी के लिए संघर्ष कर रहे हैं, दूसरी ओर दावतों का भोजन कूड़ेदान में पहुंच रहा है। यह केवल आर्थिक असमानता नहीं, सामाजिक संवेदनहीनता का भी प्रमाण है। विकसित देशों में 'डॉग्गी बैग' जिम्मेदार नागरिकता का प्रतीक है, जबकि भारत में इसे आज भी संकोच से देखा जाता है। अनेक होटलों का बचा भोजन सुरक्षित व्यवस्था से जरूरतमंदों तक पहुंचाया जा सकता है। घरों में सही मात्रा में भोजन पकाना, बचे भोजन का पुनः उपयोग, बेहतर शीतक प्रबंधन और पहले से उपलब्ध सामग्री का उपयोग अपव्यय को काफी घटा सकता है। आखिर, संस्कारों की पहचान पूजा से नहीं, अन्न के सम्मान से होती है।

समस्या जितनी व्यापक है, समाधान भी उतने ही व्यावहारिक हैं। कई होटल और भोजन-व्यवस्थापक अब 'शून्य अपव्यय विवाह पैकेज' अपना रहे हैं, जिनमें अतिथियों की संख्या के अनुसार भोजन का वैज्ञानिक आकलन होता है। अनेक स्वयंसेवी संस्थाएं विवाह और होटलों का बचा सुरक्षित भोजन जरूरतमंदों तक पहुंचा रही हैं। यह केवल सेवा नहीं, संसाधनों के सम्मान की संस्कृति है। सरकार को बड़े आयोजनों में खाद्य अपव्यय रोकने के लिए जनजागरूकता, प्रभावी नियम और कर प्रोत्साहन जैसे कदम उठाने होंगे। विद्यालयों और महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में खाद्य अपव्यय, पोषण और संसाधन संरक्षण को शामिल करना समय की मांग है, ताकि नई पीढ़ी इसे व्यवहार में उतारे। जब समाज इसे आदत नहीं, राष्ट्रीय दायित्व मानेगा, तभी वास्तविक परिवर्तन संभव होगा।

आज प्रौद्योगिकी भी इस चुनौती का प्रभावी समाधान बन सकती है। स्मार्ट फ्रिज भोजन की उपयोग अवधि बताकर बर्बादी रोक सकते हैं, जबकि मोबाइल ऐप्स से बचा भोजन तुरंत डोनेशन नेटवर्क तक पहुंचाया जा सकता है। बिग डेटा और कृत्रिम बुद्धिमत्ता विवाह, होटल और बड़े आयोजनों के लिए आवश्यकता के अनुरूप भोजन का सटीक आकलन संभव बना रहे हैं। नगर निकाय, होटल उद्योग, खाद्य कंपनियां और स्वयंसेवी संस्थाएं मिलकर खाद्य अपव्यय को काफी घटा सकती हैं। कई देशों ने ऐसे उपायों से सफलता पाई है। भारत के पास तकनीक के साथ संस्कारों की पूंजी भी है; आवश्यकता केवल दोनों के समन्वय की है। अन्न को संसाधन नहीं, संस्कार मानते ही समाधान व्यवहार बन जाएगा। समाधान की शुरुआत किसी कानून से नहीं, हमारी थाली से होगी। हर परिवार, हर मेहमान और हर होटल मालिक को समझना होगा कि एक दाना भी बर्बाद करना राष्ट्र की संपत्ति को लुटाना है। जब तक 'ज्यादा परोसो' की संस्कृति 'जितना जरूरी, उतना ही' में नहीं बदलेगी, विकास के दावे अधूरे रहेंगे। खाद्य अपव्यय रोकना केवल पर्यावरण संरक्षण नहीं, बल्कि आर्थिक विवेक, सामाजिक उत्तरदायित्व और भारतीय सभ्यता की पुनर्परिभाषा का संकल्प है। अन्न का सम्मान होगा, तो भूख घटेगी, प्रदूषण कम होगा, संसाधन बचेंगे और विकास अधिक मानवीय बनेगा। किसी राष्ट्र की समृद्धि थालियों की भव्यता से नहीं, उनमें परोसे हर दाने के सम्मान से मापी जाती है; भारत को अब यही कसौटी अपनानी होगी।

शिक्षाविद् बड़वानी (मप्र)

मोक्ष की तलाश में

कहानी

मैं अपने बीमार पिता को काशी के मुक्ति भवन ले जाने के लिए यात्रा पर था, इस आशा में कि वे जल्द ही ईश्वर को प्यारे हो जायेंगे...

इसलिए नहीं कि मैं वहाँ जाना चाहता था। मेरे पिता की लगातार बीमारियाँ, उनकी कमज़ोरी, दवाइयों और इलाज के अंतहीन खर्चों ने मुझे पूरी तरह से परेशान कर दिया था। मैंने उनकी देखभाल पर पहले ही इतना खर्च कर दिया था कि मुझे ऐसे नहीं चल पाएगा। उसी समय, एक करीबी दोस्त ने मुझे काशी के मुक्ति भवन के बारे में बताया। हिंदू मान्यता के अनुसार, काशी में मरने से मुक्ति या मोक्ष मिलता है, और मुक्ति भवन लोगों के लिए अपने आखिरी दिन बिताने की सबसे प्रसिद्ध जगहों में से एक है, उसने कहा। 'अगर तुम अपने पिता को वहाँ ले जाओगे, तो तुम्हें शांति मिलेगी, और तुम्हारे पिता को मोक्ष मिलेगा,' उसने कहा। तो, एक दिन, मैं अपने पिता के साथ ट्रेन में चढ़ा। मेरे पिता खिड़की के पास बैठे थे, बाहर देख रहे थे। उनके चेहरे पर थकान के निशान थे, लेकिन उनकी आँखें शांत थीं। 'हम कहाँ जा रहे हैं, बेटा?' उन्होंने पूछा। 'काशी।' 'काशी? हे भगवान! मैं यह सफ़र सालों से करना चाहता था।' उनके चेहरे की खुशी देखकर मेरा दिल ज़ोरों से धड़कने लगा। लेकिन मैंने उसे नज़रअंदाज़ कर दिया। पूरे सफ़र में, मेरे पापा पुरानी बातें करते रहे। उन्होंने मुझे बताया कि जब मैं बच्चा था और मुझे बुखार था, तो वे हॉस्पिटल में मेरे साथ थे। उन्होंने मुझे बताया कि कैसे मेरी माँ ने मेरी स्कूल फ़ीस भरने के लिए अपनी चूड़ियाँ बेच दी थीं। उन्होंने मुझे बताया कि कैसे उन्होंने मेरी मनचाही साइकिल खरीदने के लिए आधी रात तक ऑटो-रिक्शा चलाया था। मैंने सुना। लेकिन मेरे पास बोलने के लिए बहुत कम शब्द थे। एक लंबी यात्रा के बाद, हम वाराणसी पहुंचे और मुक्ति भवन गए। मुझे वहाँ एक अजीब सी खामोशी की उम्मीद थी, मृत्यु की खामोशी। लेकिन मैंने जो देखा वह कुछ और ही था। छोटे कमरे। सफ़ेद दीवारें। पुराने सीलिंग पंखे धीरे-धीरे घूम रहे थे। साधु, संत गलियारों में घूम रहे थे और मृत्यु की प्रतीक्षा इ कर रहे लोगों के लिए प्रार्थना कर रहे थे। मैंने अपने पापा को हमारे लिए तय कमरे में बैठा दिया। उन्होंने कहा 'मैं बहुत थक गया हूँ, बेटा। मैं थोड़ी देर लेट जाऊँगा।' मैंने अपना सिर हिलाया। जैसे ही मैंने उन्हें सोते हुए देखा, मैंने टेबल से अपना बैग उठाया और बाहर चला आया। जैसे ही मैं बिना पीछे देखे तेज़ी से आगे बढ़ा, मैंने एक कमरे का दरवाज़ा देखा जो थोड़ा खुला हुआ था और मैंने अंदर झाँका। एक बूढ़ा आदमी खिड़की के पास बैठा बाहर देख रहा था। उसके हाथ में एक पुरानी फ़ोटो थी–शायद उसकी पत्नी या बच्चों की। वह बीच-बीच में फ़ोटो देखकर मुस्कुरा रहा था दूसरे कमरे में, एक बूढ़ी औरत आँखें बंद करके हाथ में माला लिए प्रार्थना कर रही थी।उसके पास कोई नहीं था। लेकिन वह अकेली नहीं थी। उसकी यादें उसके साथ थीं। गलियारे के आखिर में, एक बूढ़े पिता बिस्तर पर लेटे हुए थे। एक जवान आदमी उनके बगल में बैठा था, उनका हाथ पकड़े हुए। 'पापा, मैं यहाँ हूँ,' वह कहता है। 'डरो मत।' मुझे नहीं पता कि बूढ़ा आदमी सुन सकता है या नहीं। लेकिन बेटे की आवाज़ में

प्यार है। वहाँ हर कोई मौत का इंतज़ार कर रहा है। लेकिन मुझे लगता है कि उनमें से कई लोग किसी और चीज़ का इंतज़ार कर रहे हैं। एक फ़ोन कॉल।

किसी का आना। एक बेटे के दिलासा देने वाले शब्द। एक बेटी की आवाज़ जो पुकार रही हो 'पापा... '। असल में वे इसी का इंतज़ार कर रहे हैं। वहाँ एक कर्मचारी ने ने मुझे देखा और कहा:

'यहाँ आने वाले ज़्यादातर लोग मौत से नहीं डरते, सर। उन्हें सबसे ज़्यादा यह एहसास परेशान करता है कि उनके अपने उन्हें भूल गए हैं। वे कहते हैं कि यहाँ मरना मुक्ति है, लेकिन अपने बच्चों के बीच शांति से मरने और यहाँ अकेले मरने में बहुत बड़ा फ़र्क़ है।' उसने आगे कहा: 'यहाँ आने वाले ज़्यादातर लोग जल्दी मर जाते हैं–बीमारी से नहीं, बल्कि यह जानकर दिल टूटने से कि उनके बच्चों ने उन्हें छोड़ दिया है।' उन शब्दों ने मुझे हिला दिया। मैंने चारों ओर देखा। कुछ आँखें दरवाज़े की ओर देख रही थीं–शायद कोई आएगा। कुछ आँखें आसमान की ओर देख रही थीं–शायद कोई बुलाएगा। दूसरों को बिल्कुल भी उम्मीद नहीं थी।

बस इंतज़ार। अचानक, मुझे अपने पापा याद आ गए। मैं मुड़ा और भागा। जब मैं कमरे में घुसा, तो मेरे पापा बिस्तर पर पसीने से लथपथ और कमज़ोर लग रहे थे। वह भी खुले दरवाज़े की तरफ़ देख रहे थे। मुझे देखकर उनकी साँस रुक गई। मैंने सोचा: अगर मैं अभी चला गया, तो क्या मेरे पाप भी कल उस दरवाज़े पर इंतज़ार कर रहा एक और चेहरा बन जाएँगे? उस पल, मुक्ति भवन सिर्फ़ एक इमारत नहीं लग रहा था। यह उन लोगों की एक खामोश दुनिया लग रही थी जिन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी दूसरों की देखभाल करते हुए, एक आखिरी प्यार भरे स्पर्श का इंतज़ार करते हुए बिताई थी।

जब मैं इन ख्यालों में खोया हुआ था, तो मैंने अपने पापा को पुकारते हुए सुना। 'बेटा... ' 'बताओ पापा?' 'तुम नहीं जा रहे?' 'मैं कहाँ जा रहा हूँ?' 'मुझे पता है कि तुम मुझे यहाँ छोड़ने आए हो।' वह एक पल के लिए रुके। 'लेकिन मैं तुम्हें दोष नहीं देता। जब माता-पिता बूढ़े हो जाते हैं, तो वे कभी-कभी अपने बच्चों के लिए बोझ बन जाते हैं। शायद मैं भी तुम्हारे लिए बोझ बन गया हूँ।' फिर उसने मेरा हाथ कसकर पकड़ लिया। 'लेकिन एक बात याद रखना, बेटा... ' 'माता-पिता के लिए सबसे बड़ी मुक्ति काशी में मरना नहीं है। अपने बच्चों के दिलों से दूर नहीं होना है।' 'प्लीज़ मुझसे नफ़रत मत करना, बेटा। मेरे मरने के बाद, मेरे लिए पूजा-पाठ करना। ' उन शब्दों ने मुझे तोड़ दिया। 'यहाँ ज़्यादा देर मत रुकना, बेटा, जाओ। लेकिन जाने से पहले, तुम्हारे पिता को एक बार गले लगाओ और चुम्मी दो।

मेरा मन कर रहा है कि तुम्हें एक बार और अपने करीब ले जाऊं।' उनकी आखिरी इच्छा। 'पिता जी...' मैं चिल्लाया। सालों का मतलब और हिसाब-किताब मेरे आँसुओं में पिघल गए। उस रात, मैं मुक्ति भवन के कमरे में अपने पिता के बगल में लेटा था। जब मैंने उनके सोते हुए चेहरे पर झुर्रियाँ देखीं, तो मुझे एक सच्चाई का एहसास हुआ: इस आदमी का कंधा कभी मेरी ज़िंदगी की सबसे सुरक्षित जगह थी। जब मैं डरता था तो वही मुझे थामे रहता था। जब मैं गिरता था तो वही मुझे उठाता था।

जब मैं असफल होता था तो वही मेरे साथ खड़ा रहता था। और मैं... उन्हें उनके आखिरी सालों में कैसे छोड़ सकता था? अगली सुबह, मैंने घर लौटने के लिए टिकट बुक किए। जैसे ही हम जाने की तैयारी कर रहे थे, मुक्ति भवन के स्टाफ़ मेरे पिता की शांति से मौत के लिए प्रार्थना करने के लिए संतों को ले आए। मैंने उन्हें रोक दिया। 'अब इसकी कोई ज़रूरत नहीं है,' मैंने कहा। 'मेरे पिता को मोक्ष नहीं मिला है। 'मुझे खुद मोक्ष मिल गया है। ' मेरे पापा ने हैरानी से मेरी तरफ देखा। 'क्या मतलब है बेटा?' उन्होंने पूछा। मैंने उनका हाथ पकड़ लिया। 'चलो घर चलते हैं पापा। लेकिन पहले गंगा में नहाकर भगवान विश्वनाथ के दर्शन करते हैं।' 'लेकिन, क्या मुझे यहां रहने की ज़रूरत नहीं है?' उन्होंने पूछा। 'आपको क्यों रहना चाहिए? आपको मोक्ष की ज़रूरत नहीं है। मेरे दिल को है–मेरे दिल को जिसने मेरे अपने पापा को बोझ समझा है। ' मेरे पापा की आँखें आँसुओं से भर आईं। उस पल, उस बुज़ुर्ग आदमी के चेहरे से जो खामोश आँसू गिरे, वे काशी मंदिर की घंटियों की आवाज़ से भी ज़्यादा पवित्र थे।

डॉ टी महादेव राव
विशाखापटनम (आंध्र प्रदेश)

शिक्षा संकल्प

कहानी

बारात दरवाजे पर पहुँच चुकी थी। दूल्हा घोड़ी से उतरने ही वाला था कि दुल्हन ने सबके सामने सिर्फ एक वाक्य कहा,पहले उस बुजुर्ग को अंदर बुलाइए तभी मैं शादी करूँगी यह सुनकर पूरा गाँव सन्न रह गया। ढोल-नगाड़ों की आवाज से पूरा गाँव गूँज रहा था। घर रोशनी से जगमगा रहा था। रिश्तेदार नाच रहे थे। दूल्हा अशोक मुस्कुराते हुए घोड़ी पर बैठा था और दुल्हन कविता मंडप में अपनी सहेलियों के साथ बैठी थी। तभी कविता ने खिड़की से बाहर देखा। घर के मुख्य दरवाजे से थोड़ा दूर एक दुबला-पतला बुजुर्ग चुपचाप खड़ा था। उसके हाथ में एक पुरानी कपड़े की पोटली थी। वह अंदर आने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। कुछ लोग उसे बार-बार हटाकर कह रहे थे,यह शादी का घर है,यहाँ मत खड़े रहो। कविता ने अपनी सहेली से पूछा,वो कौन हैं ? किसी को ठीक से पता नहीं था। कुछ ही देर में जयमाला की तैयारी होने लगी,लेकिन कविता ने साफ़ कह दिया जब तक बाहर खड़े उस बुजुर्ग को सम्मान से अंदर नहीं बुलाया जाएगा,मैं मंडप में नहीं आऊँगी। घर में फुसफुसाहट शुरू हो गई किसी ने कहा,बेटी,तुम उन्हें जानती भी नहीं कविता ने शांत स्वर में जवाब दिया,मैं उन्हें नहीं जानती लेकिन उनकी आँखों में इंतज़ार पहचानती हूँ। दूल्हा अशोक भी आगे आया और बोला,उन्हें अंदर बुलाइए। बुजुर्ग को सम्मान से कुर्सी पर बैठाया गया। उन्हें पानी दिया गया काँपते हाथों से उन्होंने अपनी पोटली खोली। उसमें एक छोटी-सी लकड़ी की बांसुरी और एक पुरानी तस्वीर थी। तस्वीर देखते ही कविता की माँ रीता के हाथ काँप गए। बाबा,आप ? पूरे घर में सन्नाटा छा गया। रीता रो पड़ी। ये ये मेरे स्कूल के चौकीदार रामदयाल काका हैं। सब लोग हैरान रह गए। रीता ने काँपती आवाज़ में कहना शुरू किया,मैं बहुत गरीब परिवार से थी। कई दिन ऐसे होते थे जब फीस भरने के पैसे नहीं होते थे। स्कूल छोड़ने की नौबत आ गई थी। उस समय किसी को पता नहीं था कि हर महीने मेरी फीस कौन भर देता है। रामदयाल काका चुपचाप सिर झुकाए बैठे रहे। रीता बोली,सालों बाद स्कूल प्रिंसिपल ने बताया था कि काका अपनी तनख्वाह में से थोड़ा-थोड़ा बचाकर मेरी फीस भरते थे। उन्होंने कभी किसी को नहीं बताया। अगर उस समय मैं पढ़ाई छोड़ देती,तो आज अपनी बेटी को इस मुकाम तक कभी नहीं पहुँचा पाती। घर में बैठे हर व्यक्ति की आँखें नम हो गईं। कविता ने पूछा माँ, आपने मुझे पहले क्यों नहीं बताया ? रीता बोली, मैंने बहुत ढूँढा था इन्हें। नौकरी से रिटायर होने के बाद ये कहीं चले गए थे। आज इतने साल बाद बिना बुलाए सिर्फ आशीर्वाद देने आ गए और हम इन्हें पहचान भी नहीं पाए। रामदयाल काका मुस्कुराए, बिटिया,मैं कोई एहसान नहीं कर रहा था। उस समय मुझे लगा, अगर एक बच्ची पढ़-लिख गई तो उसका पूरा परिवार बदल जाएगा।

इतने में कविता ने बांसुरी हाथ में ली। काका,यह किसकी है ? उन्होंने धीमे से कहा,मेरे बेटे की थी। वह अब इस दुनिया में नहीं है। उसने कहा था, पिताजी,जब किसी बेटी की शादी में जाएँ, तो यह बांसुरी उसे दे देना। आज लगा,सही जगह आ गया हूँ। मंडप में बैठे लोग अपने आँसू नहीं रोक पाए।

लेकिन कहानी यहीं खत्म नहीं हुई। फेरे शुरू होने से पहले दूल्हे अशोक ने माइक लिया। आज हमारी शादी का सबसे बड़ा उपहार हमें मिल चुका है। लेकिन हम भी एक वादा करना चाहते हैं। उसने और कविता ने मिलकर घोषणा की,आज से हर साल हम अपने विवाह की वर्षगाँठ पर आर्थिक रूप से कमज़ोर लेकिन पढ़ने की इच्छा रखने वाले कम से कम दस बच्चों की पढ़ाई का पूरा खर्च उठाएँगे। इस पहल का नाम होगा,रामदयाल शिक्षा संकल्प'। पूरा पंडाल तालियों से गूँज उठा। कुछ महीनों बाद इस पहल से दस नहीं,पचास बच्चों की पढ़ाई शुरू हुई। फिर शहर के कई लोग इससे जुड़ते चले गए। देखते ही देखते यह एक बड़ा सामाजिक अभियान बन गया। एक दिन रामदयाल काका उन बच्चों को पढ़ते हुए देख रहे थे। उनकी आँखों में संतोष था। उन्होंने मुस्कुराकर कहा,मैंने तो सिर्फ एक बच्ची की फीस भरी थी भगवान ने उसे सैकड़ों बच्चों की रोशनी बना दिया। उस शाम उनकी बांसुरी पहली बार फिर बजी। कोई बड़ा संगीतकार नहीं बजा रहा था। उसे एक छोटा-सा बच्चा बजा रहा था,जिसकी पढ़ाई अब कभी पैसों की वजह से नहीं रुकने वाली थी।

प्रेमनारायण वेद
इंदौर

कहानी

भूख

मुन्नी ने रोते हुए कहा, 'माँ, कुछ खाने को दो ना, बहुत भूख लगी है। ' चल, बाहर चलते हैं, नसीब से कुछ मिल जाए। ' ' माँ, बाहर बहुत ठंड है। ' ' ले, ये शाल ओढ़ ले, फटी है तो क्या, कुछ तो ठंड से बचेगी। ' वह मुन्नी का हाथ थामे निकल पड़ी। तेज हवा से मुन्नी के नन्हें पाँव सड़क पर जम नहीं पा रहे थे। उसने कुछ दूर जाकर, हवा से बचाने वाला कोना तलाश कर, मुन्नी को बैठा दिया। खुद, फुटपाथ पर बैठ

गई। वह भगवान से प्रार्थना करने लगी , 'भगवान, मुन्नी भूखी है। मदद कीजिए। ' पूरी सड़क पर सन्नाटा था। कुछ देर बाद एक वृद्ध उसके सामने खड़ा था। 'खाना चाहिए? ' मुन्नी तेजी से कोने से बाहर आई, ' माँ,अंकल से जल्दी से ले लो। ' वृद्ध उसे पैकिट थमा, आगे चल दिया। उसी समय एक महिला, बच्चे को लेकर उसके सामने खड़ी हो गई। बच्चा बहुत रो रहा था। उसने पूछा 'यह क्यों रो रहा है। ' महिला ने कहा,' भूखा है। ' उसने वृद्ध का दिया पैकिट खोला। चार रोटी और सब्जी थी। उसने दोनों बच्चों में बाँट दी। उसने मुस्कुराते हुए उस महिला से कहा, 'चलो, इनका तो आज का हो गया। हम अपनी रोटी के लिए इंतजार करते हैं। '

श्रीमती शोभा रानी तिवारी,
619अक्षत अपार्टमेंट खातीवाला टैंक इन्दौर

तिरस्कार

कहानी

पोस्ट ग्रेजुएशन की छात्रा मोहिनी का बदसूरती के चलते आज तक कोई सच्चा दोस्त नही बना था। तेईस वर्ष पहले नारायण के घर बड़ी मन्नतों से जब एक बेटी ने जन्म लिया तो माता पिता ने उसका नाम मोहिनी रखा। जैसे-जैसे मोहिनी बड़ी हुई, उसकी छवि नाम के विपरीत होती गयी। रंग काला और बदसूरत होने के कारण उसे बचपन से ही तिरस्कार का सामना करना पड़ा था। लेकिन मोहिनी को इसका जरा भी अफसोस न था। वह हमेशा खुश रहती और किताबों में ही खोयी रहती। किताबों को ही दोस्त मानती। वह मां रुपाली का हाथ बँटाती और बाकी समय पढ़ाई में बिताती। मेधावी छात्रा होने के साथ वह विनम्र स्वभाव और प्रकृति से प्रेम करती थी। ग्रैजुएशन का तृतीय वर्ष चल रहा था, मां-बाप को अब उसकी शादी की चिंता होने लगी थी। कई रिश्ते लौट चुके थे। रिश्ते वाले उसे देखते ही मना कर जाते। उसकी असाधारण प्रतिभा को कोई पहचान ही नहीं पाया था। उसका काला रंग और बदसूरती से उसे सभी मनहूस कहने लगे थे।लेकिन फिर भी वह खुश थी। वह छत से उड़ते पंछियों को देखती, तितलियों से बाते करती। मां-बाप अब भी उससे बहुत प्यार करते थे। नारायण और रूपाली की बस एक ही तमन्ना रह गई थी कि किसी तरह वह अपनी बेटी के हाथ पीले कर दें। हर बार की तरह आज भी एक रिश्ता उसे देखने आया था। उन सब ने उसकी पढ़ाई की डिग्रियां, मेडल और सर्टिफिकेट देखकर खूब तारीफ की, लेकिन जैसे ही लड़की को देखा तो नाक मुँह सिकोड कर चलते बने। मोहिनी को शायद इसका पहले से ही पता था। इसलिए उसे इस बात का ज्यादा अफसोस न हुआ। थोड़ी देर बाद मोहिनी तैयार होकर पुस्तकालय चली गई, ताकि मन बट जाए। शाम को जब वह घर लौटी तो वह बहुत खुश थी, वह माँ बाप को कुछ बताना चाहती थी। लेकिन आज की घटना से घर का माहौल बहुत गमगीन था। पिताजी मां पर नाराज थे। मोहिनी ने पिताजी के मुँह से पहली बार कहते सुना था- 'कि न जाने कौन से पाप किए थे, जो ये मनहूस लड़की हमारे घर पैदा हुई। इससे अच्छा बेऔलाद होते तो ही चली गई। वह मां को कुछ खास बताना चाहती थी। आज उसके लिए अहम दिन था।

थोड़ी देर बाद तैयार होकर किचन में आई तो मां सब्जियां काट रही थी। उसने पीछे से माँ को

बाहों में भर लिया। मां उसकी तरफ देखे बिना ही गुस्से में बोली- ' तू सचमुच ही मनहूस है। काश! पैदा होते ही मर जाती तो आज यह दिन देखना ना पड़ता। कई रिश्ते आये लेकिन किसी ने तुझे पसंद नहीं किया।' मां की बात सुनकर मोहिनी के दिल को बहुत धक्का लगा।

मोहिनी को अपनी माँ से ऐसी आशा न थी। उसका दिल बैठा जा रहा था। उसे महसूस हो रहा था कि अब इस दुनियाँ में उसका कोई नहीं है। उसकी खुशी उड़ गई और उदास होकर माँ से बोली 'माँ मैं बदसूरत हूं इसमें मेरी क्या गलती है। क्या मैं सचमुच मनहूस हूँ माँ! क्या मैं मर जाऊँ ?' बोलते-बोलते उसका गला रुंध गया माँ ने भी गुस्से में कहा 'जा मर जा सबको चैन मिले' तभी मोहिनी ने रोते हुए अपने कमरे में चली गई और जाकर दरवाजा बंद कर लिया थोड़ी देर बाद जैसे ही माँ का गुस्सा शांत हुआ और अपनी गलती का अहसास हुआ तो वह दौड़ती हुई उसे मनाने उसके कमरे के तरफ गयी आवाज़ देने पर भी जब दरवाजा नही खोला तो माँ के मन में अनर्थ की आशंका हुई। माँ ने जोर का धक्का दिया। दरवाज़ा खुल गया, माँ ने देखा सामने दुपट्टे से मोहिनी की लाश पंखे से झूल रही थी टेबल पर लिफ़ाफ़ा और चिट्ठी रखी थी। चिट्ठी में लिखा था' माँ मैंने आज तक तुम्हारा कहना माना। आज तुमने मरने को बोला ये भी मान रही हूँ अब तुम मनहूस लड़की की माँ नही कहलाओगी दुनियाँ ने मुझे ताने मारे लेकिन मैंने सब सहे।

लेकिन आज आप दोनों मे मुझे मनहूस कहा मुझे बहुत बुरा लगा। भगवान ने मुझे ऐसा बनाया, इसमें मेरा क्या कसूर माँ? मुझे सबने काली, मनहूस कहा, मुझे बुरा न लगा पर तुम्हारे मुँह से सुनकर मुझे बहुत बुरा लगा। मेरी प्यारी माँ! आज मैं बहुत खुश थी।

मुझे बताना था कि मेरा प्रवक्ता के पद पर चयन हो गया है और पता है माँ। आज मेरी जिंदगी की सबसे बड़ी खुशी का दिन था। क्योंकि कई वर्षों की मेहनत के बाद आज मेरा सपना पूरा हुआ था।माँ बाप को अपनी गलती पर पछतावा हो रहा था। पास पड़ोस के सभी लोग इकट्ठा हो गए थे। उन्हे बदसूरत लड़की के मुखोटे के पीछे एक अच्छी होनहार लड़की और सूरत की जगह सीरत साफ दिखाई दे रही थी।

भगवानदास शर्मा 'प्रशांत'
इटावा उत्तर प्रदेश
संपर्क : 7017777083